1.1 प्रस्तावना

समाज में मीडिया की भूमिका संवादवहन की होती है। वह समाज के विभिन्न वर्गों, सत्ता केन्द्रों, व्यक्तियों और संस्थाओं के बीच पुल का कार्य करता है। आम लोगों तक पहुंचने का एक लोकप्रिय माध्यम फिल्म है। फिल्मों का सबसे अधिक इस्तेमाल मनोरंजन के लिए होता है। हिंदी सिनेप्रेमियों को हमराज, गुमराह, धूल का फूल, बागवान जैसी बेहतरीन फिल्मों से रोमांचित करने वाले बलदेव राज चोपड़ा उन फिल्मकारों में थे जिनका मानना था कि यह माध्यम सामाजिक मुद्दों के प्रति लोगों को जागरूक करने का महत्वपूर्ण तरीका है और उन्होंने हमेशा इसी धारणा को ध्यान में रखते हुए मनोरंजक फिल्में बनायीं फिल्मकारों ने सामाजिक समस्याओं पर भी फिल्म बनाई है। अछूत-कन्या, विराजबहू, दो बीघा जमीन इस श्रेणी की कृतियां थी। फिल्म सिर्फ मनोरंजन का ही साधन नहीं है बल्कि एक सशक्त संचार माध्यम भी है। हिंदी फिल्मों की बात करें या भारतीय फिल्मों की, सिर्फ उन्हीं में नहीं दुनिया भर की फिल्मों का खेल हिस्सा रहा है। मानवीय संवेदनाओं की इस सबसे कोमल अनुभूति का तौस्तरीका जरूर समय के साथ साथ बदलता रहा है।

इंटरनेट और टेलीविजन के इस युग में सिनेमा आज भी कम लोकप्रिय नहीं है भारत जैसे देश में ही नहीं पश्चिम में भी टेलीविजन के जरिए मनोरंजन प्रदान करने वाले कार्यक्रमों में फिल्मों और फिल्म आधारित कार्यक्रमों की बहुत बड़ी भूमिका है। सिनेमा एक लोकप्रिय जनसंचार माध्यम है जिसका सबसे अधिक उपयोग फीचर फिल्म बनाने के लिए किया जाता है । आज दुनिया की सभी महत्वपूर्ण भाषाओं में फिल्म बनती है। भारत में ही लगभग 25 भाषाओं में फिल्म बनती हैं। इनमें हिंदी, तमिल, तेलुगू, मलयालम, कन्नड़, बंगला आदि भाषाओं में सबसे अधिक फिल्में बनती है। टेलीविजन के इस दौर में भी भारत दुनिया में सबसे ज्यादा फिल्म बना रहा है। फिल्मों को आमतौर पर मनोरंजन का माध्यम समझा जाता है अधिकांश फिल्मकार यही दावा करते हैं कि उनका मकसद स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करना है। लेकिन फिल्में एक सामाजिक उत्पाद भी हैं। फिल्मों के माध्यम से जो जीवन प्रस्तुत किया जाता है वह जीवन चाहे जितना काल्पनिक और यह अयथार्थ क्यों ना हो, लेकिन उसका अपने समय और समाज से किसी न किसी तरह का रिश्ता जरूर होता है। फिल्म के द्वारा ऐसी कल्पना और ऐसा अयथार्थ प्रस्तुत करना संभव ही नहीं है। जिसका वास्तव से कोई संबंध न हो फिल्म के बारे में बात करते हुए यह स्वाभाविक है कि उसमें व्यक्त जीवन और समाज के उस परिप्रेक्ष्य को समझा जाए

जिससे वह प्रेरित है। वह प्रेरणा चाहें सकारात्मक हो या नकारात्मक। 1913 में 'राजा हरिश्चंद्र'[1] से भारत में फिल्म निर्माण का सिलसिला शुरू हो गया था। लेकिन 1931 में बनी पहली बोलती फिल्म 'आलमआरा'[2] से फिल्मों को सही मायने में आकार मिला और उसके प्रभाव का दायरा बढ़ा। इसी दौर में पौराणिक व ऐतिहासिक आख्यानों और अलिफ लैला की कहानियों से बाहर निकल कर फिल्मों ने अपनी सामाजिक कुरीतियों पर चोट करने वाली और सद्भाव का संदेश देने वाली फिल्मों में प्रेम का एक सात्विक रूप उभरा। बांबे टाकीज की फिल्म 'अछूत कन्या' में सवर्ण नायक व दलित नायिका का प्रेम सामाजिक बंधनों को तोड़ता दिखा। सवाक् फिल्मों के दौर में आजादी के बाद तक कुछेक अपवादो को छोड़ कर फिल्मों में का अंदाज पारंपरिक ही रहा एक समय त्याग और समर्पण का प्रतीक रहा हिंदी फिल्मों का प्रेम समय के साथ-साथ अपना अंदाज बदलते हुए अगर ज्यादा हिंसात्मक और उत्तेजनात्मक हो गया तो इसकी वजह समाज की सोच और जीवन शैली में आया बदलाव है। हालांकि विगत कुछ वर्षों में समाज की रुढ़िवादी सोच को बदलने के लिए तथा महिलाओं की छवि प्रदर्शित करने के लिए दंगल, चक दे इंडिया, मैरीकॉम जैसी फिल्मों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के क्रम में यह विवेचित करने का प्रयास किया जाएगा कि खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से समाज में महिलाओं की स्थिति में क्या कोई बदलाव आ रहा है, क्या महिलाओं के प्रति समाज की रूढ़िवादी सोच परिवर्तित हो रही है और जिस उद्देश्य के साथ ही फिल्में बनाई जा रही हैं उसका समाज पर कितना असर हो रहा है। खेल फ़िल्मों का बढ़ता बाज़ार देखकर बड़े-बड़े निर्माता-निर्देशक भी इस पर दाँव लगाने को तैयार हैं।

लोकप्रिय फिल्मों का संबंध अपने समय और समाज से है तो उनके प्रभाव से वह समाज बच नहीं सकता जिनके लिए भी फिल्म बनाई गई हैं। आमतौर पर यह मान लिया गया है कि लोकप्रिय फिल्में मनोरंजन के लिए होती हैं और इसलिए उनको सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता नहीं है। यह दृष्टिकोण सही नहीं है बल्की इसके विपरीत लोकप्रिय सिनेमा अपने व्यापक पहुंच के कारण है अव्यावसयिक फिल्मों से कहीं ज्यादा व्यापक असर पैदा करने में कामयाब होता है। यही नहीं ज्वलंत सामाजिक समस्याओं को उठाने वाली

[1] https://hi.wikipedia.org/wiki/भारतीय_सिनेमा_का_इतिहास
[2] https://en.wikipedia.org/wiki/Alam_Ara

फिल्म इतनी लोकप्रिय न हो तो भी उनसे समाज में जबरदस्त उव्देलन पैदा हो सकता है। बैंडिट क्वीन, फायर, हे राम, बांबे आदि के उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं की इन फिल्मों ने समाज में गहरी प्रतिक्रिया पैदा की। जहां तक की दीपा मेहता की फिल्म वाटर बनने से पहले ही इतना बड़ा तूफ़ान खड़ा किया कि उसका फिल्मांकन असंभव दिखने लगा था। फिल्म एक चाक्षुस माध्यम है। जब फिल्म को पर्दे पर देखते हैं तो जीवन ठीक वैसा ही नजर आता है जैसा कि जीते हैं। अपनी इस शक्ति के कारण ही सिनेमा का प्रभाव किसी भी अन्य कला विधा के मुकाबले कहीं ज्यादा है। लोकप्रिय सिनेमा के प्रभाव की इस व्यापकता और शक्ति को देखकर यह जरुरी हो जाता है कि उस पर गंभीरता से विचार करें। सिनेमा समाज के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन को कई रूपों में और कई ढंग से अभिव्यक्त और प्रभावित कर रहा है। यह प्रभाव न तो पूरी तरह नकारात्मक है और न ही सकारात्मक। समाज को सिर्फ फिल्में ही प्रभावित नहीं कर रही है और भी कई बातें हैं जो समाज पर असर डाल रही हैं। समाज को प्रभावित वाली इन बातों के बारे में भी फिल्में हमारी एक समझ बनाती हैं। इसलिए यह भी देखना चाहिए कि फिल्में किस तरह से और किन रूपों में समाज के यथार्थ को पेश कर रही हैं। लोकप्रिय सिनेमा ने जो विशिष्ट संरचना पैदा की है उसका इस्तेमाल करते हुए फिल्में यथार्थ को पुनः सृजित करती हैं और फिल्मकार अपना नजरिया भी पेश करता है। फिल्म का संसार बहुत बड़ा है। अच्छी फिल्में साहित्य और कला का आदर्श समन्वय होती हैं। इनका उद्देश्य हमारी सौन्दर्यानुभूति और यथार्थ का विस्तार करना है। फिल्में नैतिकता स्वीकार भी करती हैं, उन्हें तोड़ती भी हैं। आज फिल्मों की उपेक्षा नहीं कर सकते। बिना फिल्मों को गंभीरता से लिए, अच्छी फिल्मों की कल्पना नहीं कर सकते हैं।

समूचे विश्व सहित भारत में भी महिलाओं की स्थिति में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिला बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही हैं और सफल भी हो रही हैं। बात चाहे राजनीति की करें या व्यवसाय की, मीडिया की हो या भारी उद्योग, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, अंतरिक्ष और विज्ञान शोध चाहे खेल के हर क्षेत्र में महिलाओं ने अपनी योग्यता और दक्षता साबित की है। जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जहां महिलाओं की प्रभावी उपस्थिति न हो। प्रस्तुत शोध के लिए अध्ययन हेतु खेल से संबंध रखने वाली चक दे इंडिया, मैरी काँम, दंगल फिल्म का चुनाव किया गया है।

प्रस्तुत शोध विषय 'खेल केंद्रित फिल्मों की विवेचना' का अध्ययन निम्न अध्यायों के अंतर्गत पूरा किया गया है।

प्रथम अध्याय- प्रस्तावना एवं शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्याय के द्वारा शोध विषय की जानकारी तथा उसके विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत किया गया है। इसमें शोध विषय का संक्षिप्त विवरण के साथ शोध के लिए प्रयोग की जाने वाली पद्धतियों को प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय में शोध का क्षेत्र शोध की समस्या तथा शोध प्रणाली के सभी पहलुओं को प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय में शोध कार्य को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

द्वितीय अध्याय- अध्ययन की पृष्ठभूमि

इस अध्याय में फिल्म की पृष्ठभूमि को प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में फिल्म का अर्थ एवं परिभाषा स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। साथ ही फिल्मों द्वारा होने वाले सामाजिक बदलाव की व्याख्या की गई है। प्रस्तुत अध्याय में फिल्मों का इतिहास, भारतीय फिल्म, खेल केंद्रित फिल्मों का स्वरूप, समाज एवं सामाजिक बदलाव का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में फिल्मों के इतिहास की पूर्ण व्याख्या की गई है, तथा खेल केंद्रित फिल्मों के स्वरूप का अध्ययन किया गया है।

तृतीय अध्याय- खेल केंद्रित फिल्मों से संबंधित खेलों का परिचय

इस अध्याय में खेल केंद्रित फिल्मों से संबंधित खेलों का परिचय है। इसमें चक दे इंडिया फिल्म से हॉकी खेल का परिचय, मैरी कॉम फिल्म से बॉक्सिंग खेल का परिचय, दंगल फिल्म से कुश्ती खेल का पखिय हैं तथा साथ में खेल एवं खेल से जुड़ी महिलाओं के बारे में जानकारी तथा उनकी उपलब्धियों का अध्ययन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय- खेल केंद्रित फिल्मों का अंतर्वस्तु विश्लेषण

इस अध्याय के अंतर्गत महिला खेल संबंधित फिल्म चक दे इंडिया, मैरी कॉम, दंगल अंतर्वस्तु विश्लेषण किया गया है। फिल्मों की भाषा,डायलॉग, समयावधि, संदेश, व्यवसाय, सामाजिक प्रभाव तथा पटकथा का अंर्तवस्तु विश्लेषण किया गया है। जिससे इन फिल्मों के प्रति समाज की रुचि का पता चलता है।

पंचम अध्याय- तथ्य प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण

इस अध्याय के अंतर्गत महिला खेल संबंधित फिल्मों के प्रति समाज, युवाओं का दृष्टिकोण कैसा है, तथा इन फिल्मों के माध्यम से समाज पर पडने वाले प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। समाज इस प्रकार की फिल्मों के बारे में क्या सोच रखता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषणकिया गया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रश्नावली एवं साक्षात्कार विधि के माध्यम से आंकड़ों को एकत्रित किया गया है

षष्ट अध्याय- निष्कर्ष एवं सुझाव

इस अध्याय में प्रस्तुत शोध अध्ययन का निष्कर्ष और सुझाव समाहित है।

परिशिष्ट

प्रस्तुत शोध अध्ययन में सहायक सामग्री प्रस्तुत की गई है। सर्वप्रथम जिस प्रश्नावली का उपयोग कर जानकारियां प्राप्त की गई हैं। उसका नमूना हू-ब-हू प्रस्तुत किया गया है, तथा साथ में साक्षात्कार के प्रश्नों को भी शामिल किया गया है। महिला खेल केंद्रित फिल्मों की तस्वीरें तथा साथ में कुछ महत्वपूर्ण महिला खिलाड़ियों की तस्वीरें को समाहित किया गया है।

1.2 साहित्य पुनरावलोकन

साहित्य पुनरावलोकन का मुख्य उद्देश्य शोध समस्या के सैद्धांतिक पहलुओं को चरणबद्ध तरीकेसे रेखांकित करना होता है। यहां जिन शोध साहित्य का पुनरावलोकन किया गया है वे शोध समस्या के मूल प्रश्नों यथा सिनेमा, समाज,खेल, मीडिया व सामाजिक बदलाव से संबंधित हैं।

- **मोहन, सुमित(2007). *मीडिया लेखन.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन.**

सुमित मोहन (2007) ने अपनी पुस्तक (मीडिया लेखन) में जनसंचार और मीडिया का विस्तृत वर्णन किया है। इन्होंने जनसंचार और मीडिया की परिभाषा को आसान भाषा में परिभाषित किया है जिसके कारण मीडिया और जनसंचार के बारे में आसानी से समझा जा सकता है। इसमें संचार के कार्य एवं संचार की प्रौधोगिकी एवं चुनौतियों को भी आसान भाषा में समझाया है। संचार माध्यमों के स्वरूप एवं मीडिया के

माध्यमों के बारे में बताया गया है। परंपरागत संचार माध्यम तथा आधुनिक संचार माध्यम के बारे में बताया गया है।

- **डॉ. लवानिया, एम. एम.(2008). *समाजशास्त्र के सिद्धान्त*. जयपुर: रिसर्च पब्लिकेशन.**

डॉ.एम.एम.लवानिया, शशी के.जैन (2008) ने अपनी पुस्तक (समाज शास्त्र के सिध्दांत) में समाज के बारे में समझाया है। समाज की परिभाषा तथा समाज के उद्देश्यों के बारे में बात की है। प्रत्येक व्यक्ति को रहने के लिए और अपनी आजीविका चलाने के लिए समाज की आवश्यकता होती है। समाज एक जैसे लोगों के समूह से मिलकर बनता हैं। इस पुस्तक के माध्यम से समाज को आसानी से समझा जा सकता है।

- **सिन्हा, प्रसून(2006). *भारतीय सिनेमा*. नई दिल्ली: श्री नटराज प्रकाशन**

प्रसून सिन्हा (2006) ने अपनी पुस्तक (भारतीय सिनेमा) में भारतीय सिनेमा के बारे में समझाया है। इस पुस्तक के अंतर्गत भारतीय सिनेमा की एक अनंत यात्रा है जिसके अंतर्गत सिनेमा का जन्म, भास्तीय संस्कृति और सिनेमा, सिनेमा की भाषा, सिनेमा समाज और बाजार, भारतीय इतिहास और स्वतंत्रता के बाद का हिंदी सिनेमा, भारतीय इतिहास, समांतर कला, फिल्म आंदोलन इत्यादि के बारे में पूर्ण रुप से समझाया गया है। किसी भी देश की कला और साहित्य उस देश की संस्कृति का आईना होता है। इस पुस्तक में भारतीय सिनेमा की यात्रा का वर्णन किया गया है। फिल्म एक साहित्य है। फिल्म अपने आप में सिमटी हुई एक संपूर्ण कला का संसार है। फिल्म का आकर्षण अधिकतर युवाओं को अपनी ओर सहज ही खींच लेता है। परंतु उचित जानकारी और दिशा निर्देश के अभाव में फिल्म की महानगरी में भटक कर जीवन बर्बाद कर लेने का खतरा अधिक है। फिल्म देश-काल और समाज का प्रतिबिंब हुआ करती है। इसलिए भारतीय सिनेमा को देश काल और समाज के रू-ब-रू रख कर देश की राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तनों के साथ-साथ, सिनेमा के संपूर्ण स्वरूपों खासकर इसकी कथा और प्रस्तुति पर उन परिवर्तनों से पड़ने वाले असर का एक संक्षिप्त आकलन इस पुस्तक में किया गया है।

- **पारख, जवरीमल्ल(2006). *हिंदी सिनेमा का समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: ग्रंथ शिल्पी**

जवरीमल्ल पारख (2006) ने अपनी पुस्तक (हिंदी सिनेमा का समाजशास्त्र) में सिनेमा के समाजशास्त्र बारे में समझाया गया है। इसमें हिंदी सिनेमा और भारतीय समाज, आज का समाज और सिनेमा का यथार्थ,

व्यवसायिकता और सामाजिकता का द्वंद, सामाजिकता बनाम प्रतियोगिता, बाजार का दबाव और विस्थापन का दर्द, हिंदी सिनेमा और यौन नैतिकता का प्रश्न, भारतीय सिनेमा में जन प्रतिरोध, सामूहिकता का माध्यम लोकतांत्रिक समाज, सिनेमा में सर्जनशीलता का सामाजिक पक्ष इत्यादि के बारे में समझाया गया है। इस पुस्तक के माध्यम से फिल्मों के कारण समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को समझाया गया है। सिनेमा आज के समय का एक सशक्त माध्यम है और इसे सिर्फ मनोरंजन का माध्यम मानना न पर्याप्त है और नहीं उचित है। निश्चय ही यह जनता के काफी बड़े हिस्से के लिए अभी भी मनोरंजन का सबसे बड़ा जरिया है लेकिन फिल्म देखते हुए हैं वह अपना मन ही नहीं बहलाते, वे अपने साथ अपने समाज और समय के बारे में नए अनुभव और नई समझ भी लेकर आते हैं। यह अनुभव और यह समझ जीवन और समाज संबंधी उनकी पहले की समझ को किसी न किसी रूप में प्रभावित जरूर करते हैं या तो जाने अनजाने उनका नजरिया बदलता है या पहले से बनी समझ और मजबूत होती है।

- **डॉ. अग्रवाल, विजय (2001).** ***आज का सिनेमा*****, नई दिल्ली: नीलकंठ प्रकाशन**

डॉ. विजय अग्रवाल (2001) ने अपनी पुस्तक (आज का सिनेमा) में भारतीय फिल्मों के बारे में बताया है। बीसवीं शताब्दी का अंतिम दशक एक जबरदस्त बदलाव का दशक रहा है। विश्व की सांस्कृतिक सीमाओं के अतिक्रमण के कारण जहां कला में एक नए मूल्य बोधों के द्वार उन्मुक्त हुए हैं, वहीं तकनीक के नए रूपों ने कई अर्थों में रचनात्मकता को निरस्त किया है। सामाजिक बदलाव के संकेत सबसे अधिक कथावस्तु के बदलाव में देखे जा सकते हैं, इसलिए लेखक ने इस पुस्तक में शामिल किए गए फिल्मों के अध्ययन में इसी को प्रमुखता दी है, तथापि विश्लेषण के अन्य बिंदू भी प्रासंगिक तौर पर उभरकर सामने आए हैं। इस पुस्तक के कुछ निष्कर्ष बड़े रोचक हैं सन् 1943 में एक फिल्म आई थी किस्मत, यह फिल्म अधिकतर जेबकतरों केंद्रित थी अपने समय की सुपरहिट फिल्म थी। वासवानी का निष्कर्ष है कि इस फिल्म के रिलीज होने के बाद से जेबकतरों की घटना काफी बढ़ गई थी। इसी प्रकार 1960 में मुगल-ए-आजम फिल्म आई इसका गीत जब प्यार किया तो डरना क्या, आज भी लोगों के होठों पर रहता है। वासवानी जी का मानना है कि इस फिल्म के बाद से प्रेमी युगलों के घर से भागने की घटना काफी बढ़ गई थी। पहली बोलती फिल्म आलम आरा का एक गीत है -दे दे अल्लाह के नाम दे दे बाबा इस गीत की पंक्ति आज भी अंधेभिखारियों का तकिया कलाम बनी हुई है। इस

प्रकार की बहुत सी घटना है जिसमें मध्यप्रदेश के 15 वर्ष के लड़के लक्की ने छत पर से छलांग लगा दी थी और वह स्वयं को बचाने के लिए शक्तिमान की प्रतीक्षा ही करता रह गया। कर्नाटक में वर्षा और अस्मा नाम की दो सहेलियों ने यह सोच कर खुद को आग के हवाले कर दिया कि शक्तिमान उन्हें बचाने आएगा। जीवन में ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिले हैं जो फिल्मों से प्रेरित मालूम पड़ते हैं। अतः इस पुस्तक के माध्यम से लेखक ने बताया है कि सिनेमा का प्रभाव समाज में रहने वाले लोगों एवं समाज पर पड़ता है। तथा समाज की रुढ़िवादी सोच को बदलने में सिनेमा का अहम योगदान रहता है सिनेमा समाज की रुढ़िवादी सोच पर ही प्रभाव नहीं डालता। समाज में रहने वाले विभिन्न तबके के लोगों पर भी प्रभाव डालता है तथा लोगों को कुरूतियों के बारे में सोचने पर मजबूर करता है तथा उन्हें बंद करने और बदलने के लिए प्रेरित करता है।

- **शर्मा, पदमपति (2007). *खेल पत्रकारिता.* नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन**

पदमपति शर्मा (2007)ने अपनी पुस्तक (खेल पत्रकारिता) में बताया है भारत जैसे देश में जहां चाहे अनचाहे क्रिकेट के प्रति जादुई आकर्षण एवं लगाव है वहीं इससे जुड़ी पत्रकारिता के लिए असीमित संभावनाओं के द्वार खोल दिए हैं। खेल पत्रकारिता के दिन-ब-दिन विस्तृत होते फलक ने इस क्षेत्र में योग्य एवं दृश्य पत्रकारों की मांग को भी बढ़ा दिया है।

अप्रकाशित शोध ग्रंथ-

- **नारायण,हिमांशु.(2009-10), शिक्षा केंद्रित हिंदी फीचर फिल्मों का विवेचनात्मक अध्ययन महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा**

प्रस्तुत शोध शिक्षा केंद्रित हिंदी फीचर फिल्मों का विवेचनात्मक अध्ययन के अंतर्गत शोधार्थी ने क्षोध के माध्यम से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है फिल्मों की राष्ट्रीय के निर्माण में महत्वपूर्णभूमिका होती है। सिनेमा मनोरंजन के सस्ते साधन होते हुए भी लोगों की मनोवृत्तियों और आकांक्षाओं को परिवर्तित करने में बहुत प्रभावशाली कारक के रूप में कार्य करती है। जहां फिल्मों ने एक ओर शिक्षित और धनी वर्ग को प्रभावित किया है वहीं दूसरी ओर निरक्षर और निर्धन वर्ग को भी समान रूप से प्रभावित किया है। इससे स्पष्टहोता है कि सामाजिक समस्याओं के समाधान तथा समाज सुधार के लिए सिनेमा एक अच्छा, सस्ता और प्रभावशाली माध्यम सिद्ध हुआ है।

- **कुमार, सुरेन्द्र. (2012-13), खेल पत्रकारिता के विकास में प्रभाष जोशी का योगदान**

  महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा

  प्रस्तुत लघु शोध खेल पत्रकारिता के विकास में प्रभाष जोशी का योगदान विशेष संदर्भ क्रिकेट के अंतर्गत शोधार्थी ने प्रभाष जोशी के क्रिकेट प्रेम की व्याख्या की गई है। खेल पत्रकारिता को जोशी जी ने नए रुप में प्रस्तुत किया है। वह क्रिकेट के साथ-साथ समाज, राजनीति पर भी लिखते थे। सी के नायडू के समय से ही वह क्रिकेट की बारीकियों को जानने लग गए थे। जोशी ने क्रिकेट पत्रकारिता को नए शब्द दिए। भाषा के प्रति जोशी जी बेहद सजग थे उनकी हिंदी भाषा पर अच्छी पकड़ थी। जोशी जी का क्रिकेट को भारत में प्रसिद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

- **कुमार, रीतेश.(2011-12), शोध शिक्षा और हिंदी सिनेमा के अंतर्संबंध**

  महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा

  प्रस्तुत लघु शोध शिक्षा और हिंदी सिनेमा के अंतर्संबंध के अंतर्गत शोधार्थी ने शिक्षा से जुड़ी सिनेमा का अध्ययन किया है। सिनेमा के द्वारा समाज की रुढ़िवादी सोच को बदला जा रहा है। शिक्षा के महत्व को समाज के समक्ष रखा जा रहा है। सिनेमा के माध्यम से महिला शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा के बारे में समाज को जागरुक किया जा रहा है। सिनेमा के द्वारा यह समझाया जाता है कि किसी भी समाज को अच्छा बनाने के लिए समाज में रहने वाले सभी व्यक्तियों का शिक्षित होना बहुत आवश्यक होता है। वर्तमान समय में या कुछ समय पूर्व अगर भारतीय सिनेमा की बात करें तो भारतीय सिनेमा में शिक्षा को लेकर काफी फिल्में बनी हैं। जिसके माध्यम से समाज को सिनेमा ने यह सोचने पर मजबूर किया है कि शिक्षा के बिना किसी भी देश या किसी भी समाज को आसानी से बदला जा सकता है।

- **नारायण,हिमांशु. (2008-09),शिक्षा और शोध सिनेमा समाज और सच्चाई**

  महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा

  प्रस्तुत लघु शोध सिनेमा समाज और सच्चाई के अंतर्गत शोधार्थी ने यह निष्कर्ष निकाला है कि भारतीय संदर्भ में किसी खास विषय वस्तु पर आधारित फिल्मों का महत्व बहुत ज्यादा है प्रस्तुत शोध में बताया है कि मनोरंजन करने सूचना देने ज्ञान बढ़ाने समाज के महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में लोगों को जागृत करने सामाजिक

बनाने और लोगों की भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। सिनेमा के माध्यम से समाज की कुरूतियों आसानी से बदला जा सकता है। समाज में रहने वाले व्यक्तियों को सिनेमा के माध्यम से आसानी से जागरुक किया जा सकता है। सिनेमा के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर किया जा सकता है समाज के समक्ष सच्चाई को आसानी से सिनेमा के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है।

- **कुमारी,रेणु. हिंदी सिनेमा और स्त्री; श्याम बेनेगल की फिल्मों के विशेष संदर्भ में (अप्रकाशित). महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा(2009-10)**

प्रस्तुत शोध हिंदी सिनेमा और स्त्री, श्याम बेनेगल की फिल्मों के विशेष संदर्भ में शोधार्थी ने शोध के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला है श्याम बेनेगल की फिल्मों की कहानी सत्य प्रतीत होती है। उन्होंने अपनी फिल्म में जिन नारी पात्रों का सृजन किया है उनकी कहानी ऐसी लगती है मानो कहीं आस पास ही घटित हुई है या हो रही है।

समाचार पत्र

- **चौकसे, जयप्रकाश, (18 अगस्त, 2014), सिनेमाई इतिहास में देशप्रेम की फिल्में, परदे के पीछे. दैनिक भास्कर; राष्ट्रीय संस्करण**

हिन्दुस्तानी सिनेमा में सौ वर्ष के इतिहास के हर कालखंड में देशप्रेम की फिल्में बनीं जिन्हें मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं। प्रारंभिक मूक फिल्मों का दौर। तब ब्रिटिश सेंसर की सख्ती से बचने के लिए देशप्रेम की भावना धार्मिक आख्यानों और इतिहास आधारित काल्पनिक कथाओं के माध्यम से अभिव्यक्त की गई। गुलामी के उस दौर में सेंसर की आंख में धूल झोंककर फिल्मकारों ने देशप्रेम का फिल्मी अलख जगाया। तब नागरिकों का चरित्र अभूतपूर्व ऊंचाई पर था और साहित्य भी उसी आदर्श से ओतप्रोत रहा। वह सांस्कृतिक नव जागरण का अभूतपूर्व कालखंड रहा है। गुलामी के दौर और आजादी के दौर की सरहद पर प्रदर्शितदिलीप कुमार अभिनीत 'शहीद' के गीत 'वतन की राह में वतन के नौजवान शहीद हो' को मोहम्मद रफी ने भावना के इस तीव्रता से गाया कि सिनेमाघर में गूंजी तालियों की ध्वनियां सदैव के लिए वातावरण में शुमार हो गईं। आमिर की 'लगान', और राकेश मेहरा की 'रंग दे बसंती' ने छद्म देशप्रेम की लफ्फाजी वाली फिल्मों से मुक्त करके दर्शकों

को अलग श्रेणी का देशप्रेम चखाया जिसकी कड़ी में हम 'अ वेडनस डे', दंगल, मैरी कांम, 'पानसिंह तोमर' और 'भाग मिल्खा भाग' को देख सकते हैं। देशभक्ति की भावना जगाती बायोपिक भी बनी हैं। जैसे केतन मेहता की 'सरदार', श्याम बेनेगल की "नेताजी सुभाष चंद्र बोस', इस श्रेणी की कालजयी सर रिचर्ड एटनबरो की 'गांधी' तथा बाबा अम्बेडकर पर बनी फिल्म महान रही।

- **चौकसे, जयप्रकाश. सिनेमाई अखाड़े में आमिर खान का धोबी पछाड, परदे के पीछे, 23 दिसम्बर 2016, दैनिक भास्कर; राष्ट्रीय संस्करण**

'लगान' से लेकर 'दंगल' तक आमिर खान ने सामाजिक सोद्देश्यता वाली मनोरंजक फिल्में गढ़ी हैं और गंभीर समस्या उठाने वाली फिल्मों में हास्य की लहर को बनाए रखा है ताकि दर्शक को गुदगुदी हो ती रहे और उसे जीवन मूल्यों पर विचार करने की प्रेरणा भी मिले। ये दर्शक के हृदय को मथते हुए दिमाग को सोचने पर मजबूर करती रहे। जाने कब से नारी विमर्श पर पन्ने रंगे जा रहे हैं परंतु 'दंगल' इस पर एक सार्थक दलील होते हुए भी आपको प्रसन्न करती है। भारत में पुत्र को हमेशा पिता के हाथ में तलवार और पुत्री को सिर पर लटकती हुई छुरी की तरह इस कदर प्रस्तुत किया गया है कि जाने कितनी पुत्रियों का जन्म के बाद हीगला घोंट दिया जाता है और अगर उन्हें पाला भी जाता है तो रूखी-सूखी रोटियां खिलाई जाती हैं और पौष्टिकभोजन पुत्रों के लिए सुरक्षित रखा जाता है, क्योंकि वंश पुत्र ही चलाते हैं जैसी भ्रामक बातें हमारे पुराने आख्यानों ने सत्य की तरह अवचेतन में स्थापित कर दी हैं। आमिर खान पात्रों के लिए कलाकार के चयन पर बहुत ध्यान देते हैं। फिल्म की नायिका का शरीर चुस्त-दुरुस्त है और भावना अभिव्यक्त करना भी जानती है। अपनी पहली ही फिल्म में वह सदियों में कमाए हुए अनुभवी की तरह लगती है, जिसके लिए निर्देशक व निर्माता ने कितनी मेहनत की होगी इसकी कल्पना करना भी कठिन है। फिल्म के निर्देशक ने अपनी पहली फिल्म 'चिल्लर पार्टी' में जो आशा जगाई थी, वे उसे 'दंगल' में पूरा करते हैं और भविष्य में वे मनोरंजन का इतिहास ही लिखेंगे। फिल्म में कुश्ती संघ केवल रुकावट ही बनता है। सच तो यह है कि सारे संगठन ही मनुष्य को रोकते हैं। सकार और उसके सारे मूढ़ दफ्तरों के बावजूद कुछ लोग अपने बलबूते सार्थकता अर्जित करते हैं। फिल्म बहुतकुछ कहती है।

- **चौकसे, जयप्रकाश.'मैरी कॉम' प्रियंका चोपड़ा की 'मदर इंडिया'. परदे के पीछे, 06 सितम्बर, 2014, दैनिक भास्कर; राष्ट्रीय संस्करण**

मैरी कॉम 45 सेकंड तक पेशेवर पहलवान से पिटकर नौ सौ रुपए कमाती है और अपने परिवार के मवेशी को छुड़ाकर घर लाती है। मैरी कॉम फायनल पूर्व अपने नन्हें बच्चे की हृदय शल्य चिकित्सा की बात फोन पर सुनती है तो बटे हुए ध्यान के कारण वह पिटती रहती है और उसके पिटने को निर्देशक इंटरकट करके शल्य चिकित्सा का दृश्य दिखाता है। वह धरती पर धराशायी पड़ी है और उधर ऑपरेशन टेबल पर बच्चे की सांस रुक जाती है। उसकी जर्मन प्रतिद्वंदी कुछ इस आशय की बात बुदबुदाती है कि मां होकर बॉक्सिंग करने चली और इस अस्पष्ट ध्वनि की डोर थामकर वह अचेत हो जाने से बचकर उठ खड़ी होती है तथा सारे जीवन संघर्ष की यातना और अपने मृत्यु से संघर्षरत नन्हें शिशु के लिए प्रार्थना को जोड़कर प्रतिद्वंदी पर कहर की तरह बरपा होती है। फिल्म के पिछले अंश में कोच उसे अपनी चादर उठाकर कहता है कि अब दो बच्चों की मां हो और दोगुनी ताकत तुम्हारे भीतर गई है। यह सब मिथ्या धारणाएं हैं कि जन्म देने पर नारी की शक्ति घट जाती है, दरअसल मां होने के बाद नारी पहले से अधिक शक्तिशाली हो जाती है। बहरहाल अपने जर्मन प्रतिद्वंदी को वह पराजित करती है और उधर उसके मृत प्राय: शिशु में प्राण लौट आते हैं। बहरहाल इस फिल्म में स्पष्ट कहा गया है कि इंफाल और मणिपुर के साथ भेदभाव होता है। याद कीजिए दिल्ली में उत्तर पश्चिम से आए विद्यार्थियों के साथ अन्याय और उनकी हत्याएं। क्षेत्रवाद के जहर पर प्रकाश डालते हुए फिल्म, राष्ट्रीय एकता की बात करती है। इस फिल्म में खेल संगठन में बैठे नीच व्यक्तियों का भी पर्दाफाश किया गया है। सच तो यह है कि व्यवस्थाओं के अड़ंगों के बावजूद देश आगे बढ़ रहा है। उसकी स्वाभाविक ऊर्जा के खिलाफ सदियों से कितने षड्यंत्र रचे जा रहे हैं। बहरहाल यह उसी तरह मात्र बॉक्सिंग की फिल्म नहीं है जैसे 'लगान' क्रिकेट की फिल्म नहीं है। यह मानवीय रिश्तों और गहन संवेदनाओं की फिल्म है। इसमें पिता-पुत्री, पति पत्नी, कोच-शार्गिद इत्यादि के रेशों से बुनावट की गई है। यहां तक कि बॉक्सिंग का पंच भी संचित यातना की अभिव्यक्ति है। आम आदमी प्राय: पंचिंग बैग पर ही प्रहार करता रहता है और यथार्थ के रिंग में नहीं जाना चाहता। कुछ चाटुखो सारा जीवन पंचिंग बैग बने रहते हैं। हर क्षेत्र में हमने आम आदमी को पंचिंग बैग बना दिया है। यहसंभव है कि

भविष्य में केवल मदर इंडिया में खेत और किसान देखना ही संभव रह जाए क्योंकि कृषि प्रधान भारत स्मार्ट सिटी की श्रृंखला में बदलने जा रहा है।

फिल्म समीक्षा

dainikbhaskar.com दंगल फिल्म

रेटिंग - 4 /5

स्टार कास्ट - आमिर खान, फातिमा सना शेख, सान्या मल्होत्रा , साक्षी तंवर , जायरा वसीम, सुहानी भटनागर

डायरेक्टर- नितेश तिवारी

प्रोड्यूसर- आमिर खान, यूटीवी , किरण राव

संगीत- प्रीतम

जॉनर- स्पोर्ट्स ड्रामा

आमिर खान फिल्म 'पीके' के दो साल बाद स्पोर्ट्स ड्रामा बेस्ड बायोपिक लेकर आए हैं, जिसे 'भूतनाथ रिटर्न्स' और 'चिल्लर पार्टी' जैसी फिल्मों के डायरेक्टर नितेश तिवारी ने डायरेक्ट किया है।

यह कहानी रेसलर महावीर फोगाट (आमिर खान) की है, जिनका सपना है कि वो अपने देश के लिए रेसलिंग में गोल्ड जीते। लेकिन उनका यह सपना पूरा नहीं हो पाता। अब महावीर की एक ही तमन्ना है कि यह सपना उनका बेटा पूरा करें। महावीर और उनकी पत्नी शोभा कौर (साक्षी तंवर) को बेटा नहीं, बल्कि 4 बेटियां होती हैं। लेकिन कुछ सालों के बाद जब महावीर को पता चलता है कि उनकी बेटियां गीता, जायरा(बचपन में), फातिमा सना शेख(बड़ी होने पर)और बबिता ,सुहानी (बचपन में) , सान्या मल्होत्रा (बड़ी होने पर) 2 लड़कों की पिटाई करके आई हैं तो उन्हें यकीन हो जाता है कि देश के लिए गोल्ड उनकी बेटियां भी जीत सकती हैं। महावीर दोनों बेटियों को रेसलिंग की ट्रेनिंग देते है और आखिर ये लडकियां मां-बाप के साथ-साथ देश का नाम भी वर्ल्ड लेवल पर ले जाती हैं।

डायरेक्शन...

फिल्म का डायरेक्शन बहुत ही उम्दा है। रियल लोकेशंस की शूटिंग देखने को मिली है। डायरेक्टर के

तौर पर नितेश तिवारी की यह बहुत बड़ी फिल्म है, जिसमें उन्होंने गजब का डायरेक्शन किया है। सीन शूट करना आसान भले ही हो , लेकिन उसके इमोशन को दर्शक तक पहुचा पाने में नितेश ने 100 % काम किया है। डायरेक्शन के साथ-साथ फिल्म की कास्टिंग काफी सही है, जिसकी परफ़ॉर्मेंस भी कमाल का है। फिल्म आपको इमोशनल भी करती है और प्रेरित भी।

आमिर खान का यह परफ़ॉर्मेंस उनकी पिछली रिलीज फिल्मों से काफी अलग है। फिल्म के हर एक किरदार ने ग़जब का प्रदर्शन किया है। मां के रूप में साक्षी तंवर ने छोटी गीता बबिता के रोल में जायरा और सुहानी ने, साथ ही बड़ी गीता और बबिता के किरदार में फातिमा और सान्या मल्होत्रा ने बेहतरीन एक्टिंग की है। आमिर के भतीजे का किरदार अपारशक्ति खुराना ने अच्छा काम किया है।

फिल्म का म्यूजिक...

फिल्म का हर एक गीत इस तरह से फिल्माया गया है। हर एक सॉन्ग कहानी का हिस्सा है और सटीक है।

- **dainikbhaskar.com मैरी कॉम**

फिल्म की कहानी

फिल्म के पहले सीन में मैंगते चंग्नेइजैंग मैरी कॉम (प्रियंका चोपड़ा) को प्रेग्नेंट दिखाया जाता है। उस वक्त वो फ्लैशबैक में चली जाती है। उसे बचपन से मैरी कॉम बनने का सफर याद आता है। मैरी कॉम को बचपन में एक बॉक्सिंग ग्लब्ज मिलता है, जिसे लेकर वो घर आ जाती है। मैरी कॉम जैसे-जैसे बड़ी होती है, उसका गुस्सा और बॉक्सिंग के प्रति जुनून भी बढ़ता जाता है। हालांकि, उसके पिता उसे एथलीट बनाना चाहते हैं। मैरी कॉम की मुलाकात नरजीत सिंह से होती है, जो बॉक्सिंग कोच होते हैं। कोच मैरी को बॉक्सिंग सिखाते हैं। नेशनल चैम्पियनशिप के लिए जब टीम चुनी जाती है, तो कोच मैंगते चंग्नेइजैंग मैरी कॉम का नाम शॉर्ट कर एमसी मैरी कॉम कर देते हैं। मैरी कॉम जब पहली बार नेशनल चैम्पियन बनती है, तो उसके पिता को उसकी सच्चाई के बारे में पता चल जाता है। इसके बाद पिता मैरी से बात करना बंद कर देते हैं। हालांकि, जब वो पहली बार वर्ल्ड चैम्पियन बनती है, तब उसके पिता को अपनी गलती का अहसास होता है और वो मैरी से माफी मांग लेते हैं। तीन बार वर्ल्ड चैम्पियन बनने के बाद मैरी अपने दोस्त ऑनलेर (दर्शन कुमार) से शादी कर लेती है। शादी के वक्त कोच मैरी से नाराज हो जाते हैं। मैरी को शादी के बाद जुड़वां बच्चे होते हैं, लेकिन उसका ध्यान हमेशा

बॉक्सिंग की तरफ ही होता है। ऐसे में, ऑनेलर उसे फिर से बॉक्सिंग करने की सलाह देता है। हालांकि, मां बनने के बाद फिर से बॉक्सिंग रिंग में मैरी का सफर आसान नहीं होता है।

प्रियंका की एक्टिंग:

प्रियंका चोपड़ा कितनी बेहतरीन अभिनेत्री हैं, इस बात को उन्होंने एक बार फिर साबित किया है। यूं तो वो 'बर्फी' और 'सात खून माफ' जैसी फिल्मों में अपने अभिनय से वह वाहवाही लूट चुकी हैं, लेकिन इस बार 'मैरी कॉम' बनकर उन्होंने अपनी एक्टिंग का कद और ऊंचा कर लिया है। फिल्म में उनके लिए टफ रोल था। इसमें फिटनेस के साथ एनर्जी की भी जरूरत थी।

उमंग कुमार का डायरेक्शन:

बतौर डायरेक्ट उमंग कुमार की ये पहली फिल्म है, लेकिन फिल्म देखकर इस बात का पता लगाना बेहद मुश्किल है। फिल्म की शुरुआत जिस रफ्तार से होती है, अंत तक उसी रफ्तार से आगे बढ़ती है। ऐसे में, उमंग का बतौर डायरेक्टर यह अच्छा डेब्यू कहा जा सकता है।

संगीत

'मैरी कॉम' बायोपिक मूवी है। फिल्म का संगीत से ज्यादा लेना-देना नहीं है। हालांकि, फिल्म का गाना 'दिल ये जिद्दी' है न सिर्फ एक खिलाड़ी में जोश पैदा करता है, बल्कि दूसरों को भी प्रेरणा देता है। फिल्म के दूसरे गानों में भी शशि-शिवम ने अच्छा म्यूजिक दिया है।

फिल्म में नेशनल एंथम

मैरी कॉम की कामयाबी को एक फिल्म के जरिए नहीं दिखाया जा सकता। ऐसे में, फिल्म उस वक्त खत्म होती है, जब वो चौथी बार वर्ल्ड चैम्पियन बनती हैं। इसके बाद पूरा नेशनल एंथम सुनाया जाता है।

- **निर्देशक: शिमित अमिन (2007) ने अपनी फिल्म चक दे इंडिया में दिखाया है-**

कुल व्यवसाय-102 करोड़

भारत में-70 करोड़

हॉकी भारत राष्ट्रीय और देशी खेल है, लेकिन आज यह पिछड़ा हुआ खेल माना जाता है। पिछले कई वर्षों से राष्ट्रीय खेल हॉकी में हमारे देश की टीम का प्रदर्शन बेहद लचर है। इसकी वजह से यह खेल अपनी

लोकप्रियता खो बैठा है। हॉकी एसोसिएशन के पदाधिकारियों की सोच रहती है कि चकला-बेलन चलाने वाली लड़कियाँ हॉकी क्या खेलेंगी, लेकिन निर्देशक ने कई दृश्यों के जरिये साबित किया है कि महिलाएँ किसी भी मामले में पुरुषों से कम नहीं हैं। छोटे-छोटे दृश्यों में कई बातें सामने आती हैं, जो निर्देशक और लेखक की सोच बयान करती हैं। कबीर खान (शाहरुख खान) महिला हॉकी टीम का कोच बनकर इस टीम को विश्वविजेता बनाता है। भारतीय महिला हॉकी टीम को प्रशिक्षण देना बेहद कठिन है। इस टीम में कोई जोश नहीं है। अच्छा खेलने की चाहत नहीं है। भारत के लिए खेलने में जो गर्व महसूस होता है वह कभी इस टीम के खिलाडियों ने महसूस नहीं किया है। वे सिर्फ इसलिए खेल रही हैं ताकि रिटायरमेंट के बाद उन्हें कुछ सरकारी लाभ मिलें। महिला टीम होने के कारण इन्हें पुरुषों की छींटाकशी का शिकार भी होना पड़ता है। कबीर खान उन्हें सीखाता है कि 'जो महिला पुरुष को पैदा कर सकती है वह कुछ भी कर सकती है'। कोई भी मैच जीतने का स्वाद कैसा होता है। ट्राफी जीतकर उसे उठाने में कितना आनंद आता है। भारत के लिए खेलना कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। 'चक दे इंडिया' के जरिये निर्देशक शिमित अमीन और लेखक जयदीप साहनी ने कई बातें कही हैं महिला खिलाड़ियों को पुरुषों से कमतर आंका जाता है ऐसा समझा जाता है चकला-बेलन चलाने वाली लड़कियाँ हॉकी क्या खेलेंगी।

मै हिन्दू हूँ, यह मुस्लिम है, वह सिख है, सभी बोलते हैं, लेकिन वे भूल जाते हैं कि सबसे पहले वे भारतीय हैं।

साक्षात्कार

http://www.amarujala.com/photogallery/entertainment/bollywood/aamir-khan-interview-for-dangal

विषय केंद्रित फिल्मों में आज के समय में आमिर ख़ान का हस्तक्षेप सबसे ज्यादा है। विषयपरक फिल्मों के प्रति उनके समर्पण का ही एक उदाहरण है उनकी फिल्म दंगल जिसके लिए उन्होने किरदार के हिसाब से लम्बा समय पहले वजन बढाने में फिर अन्य जरूरी चीजों में लगाया।

अमर उजाला को दिये गये अपने साक्षात्कार में आमिर खान ने दंगल में लिविंग कैरेक्टर्स के किरदार निभाने के बारे में बताया कि " चैलेंज तो हर किरदार में रहता है लेकिन जब लिविंग कैरेक्टर्स के किरदार को

निभाते है तो ऐसे में आपकी जिम्मेदारी और बढ़ जाती है। आप उस इंसान को दोबारा जीवित कर रहे होते हैं। किरदार अदा करने में यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उसमें एक सच्चाई हो, एक एक्यूरेसी हो, ये जिम्मेदारी हम पर होती है।

आमिर खान के अनुसार यह फिल्म समाज की सोच को बदलने में सहायक होगी महिलाओं को खेल के प्रति जागरूक करने तथा उनको मौका देने के पक्ष में यह फिल्म बनाई गई है। इस फिल्म के माध्यम से महिलाओं को आगे बढ़ने का मौका मिलेगा तथा समाज की रुढ़िवादी सोच में बदलाव आएगा। इस फिल्म के माध्यम से बताया गया है लड़कियां लड़कों से कम नहीं होती हैं अगर लड़कियों को मौका मिले तो वह लड़कों से भी आगे निकल सकती हैं।

- **http://www.amarujala.com/news-archives/india-news-archives/interview-of-boxer-mary-kom-hindi-news-rm**

पांच बार की वर्ल्ड चैंपियन 31 वर्षीय महिला मुक्केबाज एमसी मैरी कॉम का कहना है कि अफसोस है कि उनके बॉक्सिंग कैरियर में परिवार के लोगों ने कोई सपोर्ट नहीं किया। उन्होंने इस फिल्ड को खुद चुना है किसी ने उन्हें इस फिल्ड में आने के लिए इनकरेज नहीं किया। उन्होंने ठान लिया था कि मुझे इस फिल्ड में आगे बढ़ाना है। वह अकेले अपने मंजिल की ओर बढ़ने लगीं। लाख घरवालों के विरोध के बावजूद वह हताश और निराश नहीं हुईं। मैरी कॉम ने कहा कि हर बच्चों में एक खिलाड़ी होता है। जरूरत है उसे पहचानने की और उसे गाइडेंस देकर उस क्षेत्र में आगे लाने की। बच्चों को मोटिवेट करना बहुत जरूरी है। बच्चों में पंख लगाने का काम सबसे पहले स्कूल करता है। सही मेहनत और लगन से आप जो बनना चाहते हैं, उसमें आपको सौ फीसदी हार्ड वर्क करना होगा। डिसिप्लिन भी इसके लिए बहुत जरूरी है। एमसी मैरी कॉम फिल्म में उनकी असली जिंदगी को कितना दिखाया गया है, इसको लेकर उनका कहना है कि उन्होंने इसे तीन बार देखा है। वह खुश हैं, फिल्म को देख कर हर लड़की मोटिवेट हो सकती है, लेकिन वह जो हैं वहां तक पहुंचने में जो संघर्ष करना पड़ा उसका केवल 10 फीसदी दिखाया गया है। वह पूरा 100 फीसदी नहीं है। फिर भी फिल्म उन्हें काफी पसंद आई।

- **http://www.amarujala.com/newsarchives/indianewsarchives/interview-of-boxer-mary-kom-hindi-news-rm**

अमर उजाला के रुपायन अचीवर्स को सम्मानित करने कानपुर पहुंची बॉक्सर मैरीकॉम ने खेलों में चलने वाली कथित लॉबिंग और राजनीति पर सीधा हमला बोला। मुक्केबाजी में ओलंपियन एमसी मैरी कॉम ने कहा कि देश में खेल प्रतिभाओं की कमी नहीं है, जरूरत है खेल में राजनीति खत्म करके टैलेंट को आगे लाया जाए। बॉक्सिंग को लेकर यूथ में काफी क्रेज है, लेकिन सभी को बेहतर प्लेटफार्म मिले, इसके लिए निचले स्तर पर स्पोर्ट एसोसिएशन को भी काम करना पड़ेगा। हर खिलाड़ी मेडल जीतने के लिए ही खेलता है, लेकिन ऐसा कोई-कोई ही कर पाता है। 'अमर उजाला' से विशेष बातचीत में ओलंपिक पदक विजेता मैरी कॉम ने कहा कि पिछड़े तबके की लड़कियां तेजी से खेल में आगे आ रही हैं, लेकिन उन्हें सही गाइडेंस और सही प्लेटफार्म नहीं मिलने से वे स्टेट लेवल से आगे नहीं बढ़ पाती हैं।

1.3 अध्ययन का क्षेत्र

किसी भी शोधकार्य के लिए जब शोध प्रश्न का निर्माण किया जाता है तो अध्ययन क्षेत्र में शोध से संबंधित तथ्यों का संकलन विभिन्न शोध विधियों द्वारा किया जाता है। शोध क्षेत्र हेतु जगतपुरा का चुनाव किया गया जो कि जयपुर शहर में स्थित है। जयपुर, राजस्थान के पूर्व भाग में स्थित है। राजस्थान की राजधानी जयपुर को गुलाबी नगरी नाम से भी जाना जाता है। इस नगर में सुंदर नगरों, हवेलियों और किलों की भरमार है। जयपुर का अर्थ है - जीत का नगर। इसे कुशवाह राजपूत राजा सवाई जय सिंह, द्वितीय ने 1727 में बसाया था। उस समय का यह प्रथम नगर था जो योजनाबद्ध ढ़ंग से बसाया गया था। इसका ख़ाका तैयार किया था वास्तु शिल्पी विद्याधर भट्टाचार्य ने। मुगलों ने जो भवन बनवाए उनमें लाल पत्थर का उपयोग किया जबकि राजा जय सिंह ने पूरे नगर को गुलाबी रंग से पुतवाया। जिसके कारण जयपुर को गुलाबी नगर कहा जाता है। जयपुर शहर की साक्षरता दर 2011 की जनगणना के अनुसार 75.5 % है तथा महिला साक्षरता दर 64.0 % है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान का कुल लिंगानुपात 926 स्त्रियाँ प्रति 1000 पुरुष है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान में 0-6 वर्ष की लिंगानुपात 888 स्त्रियाँ प्रति 1000 पुरुष है। इसमें ग्रामीण क्षेत्र का लिंगानुपात (0-6 वर्ष) 892 स्त्री प्रति 1000 पुरुष है तथा ग्रामीण क्षेत्र का लिंगानुपात (0-6 वर्ष) 874 स्त्रियाँ

प्रति 1000 पुरुष है।वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार जयपुर शहर का कुल लिंगानुपात 909 स्त्रियाँ प्रति 1000 पुरुष हैं।

1.4 शोध की प्रासंगिकता

मीडिया का लक्ष्य है कि वह जन भावनाओं को समझें और उसे मुखरित करें तथा निष्पक्ष होकर जन विकृतियों(कुरूतियों) का पर्दाफाश करें। ऐसा नहीं है कि भारतीय सिनेमा इन आदर्शों का पालन नहीं करती। उन्होंने अपने दायित्वों को समय-समय पर निर्वहन करके अपनी प्रतिबद्धता को हमेशा दोहराया है। चूंकि मीडिया व्यवसाय अन्य व्यवसाय से अलग हैं। मीडिया एक ऐसा व्यवसाय है जिससे जनता का सरोकार सीधे तौर पर जुड़े हुए हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि आम जनमानस पर फिल्मों का सकारात्मक-नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रस्तावित शोध अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया है कि खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ता है? और इस प्रभाव के कारण समाज में क्या बदलाव आ रहे हैं? इसका अध्ययन शोध के अंतर्गत किया गया है।

1.5 शोध उद्देश्य

- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा समाज की मानसिकता पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना
- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा महिलाओं के खेलकूद पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना
- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा महिलाओं के सामाजिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना
- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा महिलाओं के मानसिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना
- युवा वर्ग पर खेल केंद्रित फिल्मों के प्रभाव का अध्ययन
- खेल के विकास में फिल्मों के योगदान का अध्ययन

1.6 शोध प्रश्न

- खेलों के विकास में खेल केंद्रित फिल्मों का योगदान किस तरह का है ?
- खेल केंद्रित फिल्मों के प्रति आम जनता की अभिरूचि कैसी है ?
- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा जागरूकता का स्तर किस तरह का है ?

- खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से समाज में महिला खेल के प्रति पड़ने वाले प्रभाव को जानना ?
- खेल केंद्रित सिनेमा समाज को कैसे जागरूक एवं प्रभावित कर रहा है?

1.7 शोध का महत्व

फिल्में लोगों के जीवन का एक अभिन्न हिस्सा बन गई है, इसलिए आने वाले समय में मेरे कनिष्ठ सहयोगियों के शोध कार्य में सहायक सामग्री साबित होगी। खेल केंद्रित फिल्मों के कारण समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को समझने का प्रयास किया गया है। अत: शोधार्थी द्वारा प्राप्त आंकडो का उपयोग संबंधित विषय के लिए सार्थक साबित होगा।

1.8 शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति द्वारा किया गया है। शोध के उप-प्रकार के रूप में विवरणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। विवरणात्मक शोध का उद्देश्य चरों के मध्य सम्बन्ध का क्या आधार है। इस शोध में शोधार्थी समाज और सिनेमा के मध्य क्या सम्बन्ध है सम्बन्ध के लिए विवरणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है।

प्राथमिक स्त्रोत

प्राथमिक आंकड़े वे है जिन्हे स्वयं अन्वेषणकर्ता सबसे पहले उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संकलित करता है। प्राथमिक आंकड़ो को आरंभिक आंकड़े भी कहा जाता है। इस शोध के दौरान शोधार्थी समाज के लोगों से मिलकर उनसे साक्षात्कार के दौरान यह पूछा जाएगा की आज सिनेमा का प्रभाव समाज पर कैसे पड़ रहा है तथा सिनेमा का समाज एवं महिलाओं पर आज कितना प्रभाव पड़ रहा है। समाज के लोगों से यह भी जानने की कोशिश की जाएगी आज शिक्षा के क्षेत्र और खेल-कूद में सिनेमा कितना प्रभावी है।

प्रश्नावली

प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रश्नावली के माध्यम से प्राथमिक आंकड़ों को एकत्र किया गया। शोध के अध्ययन हेतु मिश्रित प्रश्नावली का उपयोग किया गया।

अंर्तवस्तु विश्लेषण

प्रस्तुत शोध अध्ययन में चक दे इंडिया ,मैरी कॉम, दंगल फिल्मों का अंर्तवस्तु विश्लेषण किया गया है। भाषा,डायलॉग, समयावधि, संदेश, व्यवसाय, सामाजिक प्रभाव तथा पटकथा का अंर्तवस्तु विश्लेषण किया गया है।

साक्षात्कार

प्रस्तुत शोध अध्ययन में दो विशेषज्ञों का संगठित साक्षात्कार को शामिल किया गया है। साक्षात्कार के माध्यम से शोध अध्ययन के लिए उपयोगी प्राथमिक आंकड़ों को एकत्र किया गया।

प्रतिदर्श एवं प्रतिदर्श चयन का आधार

- प्रतिदर्श के चयन का प्रकार प्रायिकता और उपप्रकार उद्देश्यात्मक का उपयोग किया गया है।
- प्रस्तुत शोध में अध्ययन के लिए 50 (उद्देश्यात्मक) प्रतिदर्श का चयन किया है।
- 12 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों को शामिल किया गया हैं।
- 25 महिला एवं 25 पुरूषों को शामिल किया गया हैं

आंकड़ों का विश्लेषण

- शोधार्थी द्वारा संग्रहीत किए गए आकड़ों का विश्लेषण
- प्रस्तुतीकरण (पाई चार्ट)

1.9 शोध की सीमाएं

शोध की सीमाएं निम्न इस प्रकार से हैं।

- निश्चित समय अवधि
- समय के अभाव एवं गुणात्मक शोध के कारण समग्र फिल्मों में से खेल से संबन्धित फिल्मों में से मुख्य रूप से तीन फिल्मों (2007-2016) का चयन किया गया।
- प्रश्नावली के लिए गुलाबी शहर के नाम से प्रख्यात जयपुर शहर स्थित जगतपुरा का चुनाव कर आंकड़ों को एकत्र किया गया।

1.10 शोध का सैद्धांतिक पक्ष

लासवेल का मॉडल, 1948 -

अमेरिका के राजनीतिशास्त्री हेराल्ड डी. लासवेल नेशन 1948 में कैसा फार्मूला बनाया जिसका संचार और संचार शोध में सर्वाधिक प्रचलित मुहावरे के रुप में इस्तेमाल किया जाता है। लासवेल ने ग्राफिक नहीं बल्कि शाब्दिक मॉडल प्रस्तुत किया। इसे संचार का पहला व्यवस्थित मॉडल माना जाता है, उनके अनुसार संचार की किसी क्रिया को समझने के लिए सबसे बेहतर तरीका इन पांच प्रश्नों का जवाब ढूंढना है

कौन (who)

क्या कहा (says what)

किस माध्यम से (which channel)

किससे (to whom)

किस प्रभाव से (with what effect)

इसे निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से समझा जा सकता है-

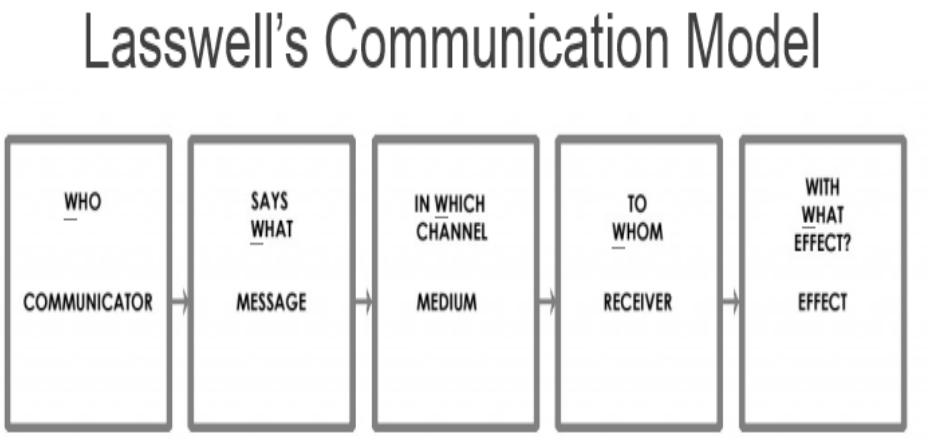

[3]

इस मॉडल के अंतर्गत कलाकार द्वारा संदेश को फिल्म माध्यम द्वारा दर्शकों तक प्रेषित किया जाता है। कलाकार का मुख्य कार्य दर्शकों तक फिल्म के माध्यम से संदेश आसानी से पहुंचाना होता है। कलाकार द्वारा प्रेषित किए

[3] https://in.images.search.yahoo.com/search/images; Laswel+Model

गए संदेश से दर्शकों पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह प्रभाव सकारात्मक एवं नकारात्मक हो सकता है। जरूरी नहीं है कि फिल्मों का दर्शकों पर सकारात्मक प्रभाव पड़े, फिल्मों का नकारात्मक प्रभाव भी दर्शकों पर पड़ता है। इस शोध अध्ययन में खेल संबंधित फिल्मों द्वारा समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना है। अतः यह मॉडल इस शोध अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है।

उपयोगिता एवं परितुष्टि सिद्धांत

1946 के दशक में लेजसफेल्ड ने टू-स्टेप फ्लो तथा ओपिनियन लीडर की अवधारणा प्रस्तुत करके मास मीडिया के पावरफुल इफेक्ट्स थ्योरी से मोहभंग कर दिया। इसके साथ ही संचार विद्वान ने पुरानी अवधारणाओं तथा आग्रहों पर पुनर्विचार प्रारंभ किया। इस धारणा पर भी पुनर्विचार हुआ कि लोग महज मूकदर्शक या निष्क्रिय दर्शक होते हैं। प्रश्न उठा कि लोग आखिर मास मीडिया का उपयोग किस रूप में और क्यों करते हैं? लोग किस रूप में अपने लिए मीडिया का चयन करते हैं?

इलिह कत्ज ने कहा है कि मीडिया लोगों के साथ क्या करता है, इस सवाल को इस तरह बदलकर देखा जाना चाहिए कि लोग मीडिया के साथ क्या करते हैं। इसके लिए उन्होंने उस वक्त तक हुए कुछ शोधों के आधार पर यूजेज और ग्रेटिफिकेशन की अवधारणा पेश की। उन्होंने बर्नाड़ बेरेलसन के एक शोध का उल्लेख किया। वह शोध 1994 में किया गया। 15 दिनों तक हॉकरों की हड़ताल के कारण लोगों को अखबार से वंचित होना पड़ा था। बर्नार्ड़ बेरेलसन ने इस विषय पर शोध किया कि अखबार ने पड़ने के कारण पाठकों ने क्या खोया। अधिकांश पाठकों ने कहा कि उन्होंने काफी कुछ खोया॥ बहुत से लोगों को लगता है कि यह देश दुनिया को जानने समझने का अनिवार्य माध्यम है। कुछ लोगों को सामाजिक प्रतिष्ठा, कुछ लोगों का मनोरंजन, कुछ को आराम या राहत, कुछ लोगों को पलायन, या अपनी समस्याओं से राहत के लिए अखबार पढ़ना जरुरी लगता है। कुछ लोग इसलिए अखबार पढ़ते हैं ताकि दूसरों के साथ बातचीत के दौरान भी अपना समसामयिक एवं विविध विषयों पर ज्ञान प्रस्तुत कर सकें। कुछ लोगों को फैशन ,मौसम, वाणिज्य, आधुनिक तकनीक, खेल वगैरह की नई जानकारी व अन्य उपयोगी सूचनाएं मिल जाती है। इस अवधारणा के अनुसार हर व्यक्ति के लिए सामाजिक अंतर्क्रिया एक महत्वपूर्ण जरूरत है मीडिया के जरिए वैकल्पिक रूप से सामाजिक अंत:क्रिया एक महत्वपूर्ण जरूरत है। मीडिया के द्वारा लोग संतुष्टि एवं तनाव मुक्ति हासिल करते हैं, समाज की समस्याओं से

अवगत होते हैं। लोगों को अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मीडिया की आवश्यकता होती है। पानी,भोजन,आवास,सामाजिक स्वीकृति प्रेम इत्यादि आवश्यकताओं की ही तरह कुछ अन्य आवश्यकताएं भी है जिनके लिए मास मीडिया का उपयोग किया जाता है। डैविसन के अनुसार श्रोता महज निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं है। उन्हें ऐसी मिट्टी नहीं समझना चाहिए, जिसे संचारकर्ता कोई मनचाहा आकार प्रदान कर दें। श्रोता दरअसल ऐसे लोग हैं, जो संचारकर्ता से कुछ चाहते हैं। अपने लिए उपयोगी चीजें ढूंढ लेते हैं। उन्हें सदा अपने उपयोग की चीजों की तलाश होती है। इस तरह,यहां श्रोता और संचारकर्ता के बीच एक किस्म की सौदेबाजी होती है।

यूजेज और ग्रेटिफिकेशन निम्न रूपों में होता है-

1. मनोरंजन
2. प्रमुख लोगों की प्रशंसा या निंदा होते देखना
3. अपनी जिज्ञासा मिटाना तथा सूचित करना
4. ऐसे आदर्शों पात्रों की तलाश करना जिनका अनुकरण संभव हो
5. अपनी पहचान की तलाश
6. देश दुनिया के बारे में जानकारी पाना
7. चमत्कार उत्कृष्ट एवं अद्भुत चीजों को जानना
8. अप्रिय भावनाओं को मिटाना
9. बुराइयों एवं बुरे लोगों के बारे में जानना
10. अपने नैतिक आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को मजबूत करना